

॥ श्री ॥

पण्डितवर सर्वज्ञमित्र विरचित
आर्य्य तारा स्तोत्रम् ।

फरुखाबादस्थ

ॐ पं० दुर्गादास कृत ॐ

भाषा टीका समेत ।

जिपको "

श्रीमहारत्न साके भिन्दु

और

श्रीकाजिमानसिंह तुलाधरने

मुद्रित करा प्रकाशित किया ।

सम्बत् १९७०

मूल्य १)

उपोदात ।

यहां काश्मीर मण्डलमें बौद्ध सत्व देशके रहनेवाले श्रीयुत बुद्धजीके कृपा समुद्रमें डूबे हुए बड़ी दयालुतासे बड़ा भया चित्त ऐसे एक सर्वज्ञ मित्र नाम सन्यासी थे वह चिन्तामणिके समान याचकोंकी इच्छानुसार वस्तु देनेसे संसारमें बड़े दाता होकर प्रसिद्ध थे, वह आप ही अपना धन याचकोंको देकर भिक्षा पात्र शेष रख देशान्तरमें भ्रमण करते हुये बज्र मुकुट नामक राजाके देशमें पहुंचे, वहां वृद्ध ही जानीसे अति जीर्ण परिवाररहित एक ब्राह्मणको देखी और बड़ी करुणा करके उससे पूछा कि आपकी ऐसी कष्ट दशमें भी कहां जाना है, ब्राह्मण बोला कि मैं अपनी कन्याके विवाह करनेके निमित्त धनकी याचना करने सर्वज्ञ मित्र सन्यासीके पास जाता हूं, महर्षिने कहा कि वह तो अपना सब धन याचकोंको दे सन्यासी हो कर देशान्तरको चले गए क्या आपने यह वृत्तान्त नहीं सुना, यह सुनकर वृद्ध मुनि बहुत काल पर्यन्त बड़ी बड़ी उसास ले चेष्टा हीन सा होकर कुछ काल तक खड़ा रह गया, इस प्रकार शोकाकुल ब्राह्मणको देख महर्षि सर्वज्ञ मित्र समझता कर बोले आप इस प्रकार धैर्य न छोड़िये मैं आपका सब काम सिद्ध करूंगा, ऐसा कह ब्राह्मणको साथ लेकर बज्र मुकुट राजाके पास जाय सुवर्णसे बराबर कर अपने शरीरको बेच वह सुवर्ण ब्राह्मणको देकर विदा किया, और आप राजाके पास उपस्थित रहे (कहते हैं कि राजाको किसीने उपदेश किया था कि आप मेरे कहे हुए अङ्ग, त लक्षणोंसे संयुक्त एक सौ मनुष्योंके मस्तक कटवा उन मस्तकों पर बैठकर स्नान करनेसे आपका मनोरथ सिद्ध होगा)

इस वाक्यको सुन बहुत कालसे खोज बराबरका सुवर्ण देकर
 निदानवे मनुष्य मोल ले लिये थे, अब सर्वज्ञ मित्रके मिलानेसे सौ
 पूर्ण हो गये अब कल प्रभात ही कटे हुए मस्तकों पर बैठ स्नान
 करूंगा ऐसा कहके इन्हें भी उन्हीं पुरुषोंमें पहुँचानेके लिये
 आज्ञा दिया, सेवक सर्वज्ञ मित्रको भी उन्हीं मनुष्योंके पास ले
 गये जब सर्वज्ञ मित्रको देख वह सब बध्य पुरुष कल प्रातःकाल
 ही हम सब मरेंगे यह मुन्दित पुरुष साक्षात् काल रूप होकर
 उपस्थित हुआ ऐसे सोच बड़े शब्दसे चिल्लाने लगे, महर्षिने कहा
 अब क्यों ऐसे असावधान होते हो प्रथम ही क्यों ऐसा जान कर
 शरीरको बेचा। फिर उन दीन पुरुषोंको समझा कर बड़ी करुणा
 दृष्टिसे देख विचार किया कि माता आर्य्य ताराको छोड़ और
 कोई इनके निस्तारका कारण नहीं है, ऐसा सोच पवित्र हो
 महर्षि सर्वज्ञमित्र भगवतीकी स्तुति करने लगे, स्तुतिकी कुछ
 श्लोक बन जानेके बाद (भगवती) आपसे ही प्रगट होकर उनको
 उपदेश कर गुप्त हो गई, तब सर्वज्ञ मित्रने उन सब बध्य पुरुषोंको
 बुला कर कहा तुम सब एक साथ ही कल स्नान करना। प्रभात
 होते ही राजाके सेवकोंने वह सब बध्य पुरुषोंको स्नान करनेके
 लिये एक सर (तालाव) के तट पर पहुँचाये, बध्य पुरुषोंने
 कहा हम सब अलग अलग स्नान करेंगे तो बहुत विलम्ब होगा
 इससे एक साथ ही क्यों न स्नान करलें, ऐसा कह कर सब
 एक बारही जलमें घुस पड़े और भगवतीकी कृपाके प्रभावसे सब
 अपने अपने स्थान पर पहुँच गये, कुछ काल के उपरान्त राज
 पुरुषों ने उन मनुष्यों को डूबा जान बड़े यत्नसे खोजा परन्तु वह
 नहीं मिले, और उनके मूल्यमें जो सुवर्ण दिया गया था वह सब
 तालाव के तीर पर ईकट्टा देखा, तब राजसेवक भयसे व्याकुल
 होकर विस्मय करने लगे और सम्पूर्ण वृत्तान्त राजा के पास जाकर

कहा, राजा अपने सेवकों का वचन सुनकर विचार करने लगा कि यह सब काम उसी एक महात्मा का है, और बहुत प्रसन्न होकर सर्वज्ञ मित्र को बुलायके उनका शिष्य हो गया, इस प्रकारसे यह कथा संसार में प्रसिद्ध है ।

इस स्तोत्र में स्रग्धरा कन्द है उसका लक्षण कविकुल शिरोमणि कालिदासने स्वरचित श्रुतबोधमें कहा है ;—

चत्वारोयत्रवर्णः प्रथममलघवः षष्ठकः सप्तमोपि
द्वौतद्वत्षोडशाद्यौ मृगमदमुदिते षोडशान्द्यौतथान्द्यौ ।
रम्भास्तम्भोरुकान्ते मुनिमुनिभिर्दृश्यते चेद्विरामो
वाले बन्धैः कवीन्द्रैः सुतनुनिगदिता स्रग्धरा सा प्रसिद्धा ॥

भावार्थ—जिस कन्दके आदिमें चार अक्षर दीर्घ हों तथा कृठां और सातवां दीर्घ हों तथा चौदहवां और पंद्रहवां दीर्घ हों तथा सत्रहवां दीर्घ हों तथा बीसवां और इक्कीसवां अक्षर दीर्घ हों शेष लघु हों और सात सात अक्षरों पर विश्राम हो उसे कवीश्वरों ने स्रग्धरा कन्द कहा है, उदाहरण यथा:—

भिन्नुः सर्वज्ञमित्रो द्विजमति कृपणं वीक्ष्यतत्तुष्टिहेतोर्विक्रीय
स्वशरीरं कृतसमं कनकं राजवध्योवभूव तत्स्तोत्रात्सु प्रसन्ना सुखित
जनशतं मृत्युबंधान्मुमुच श्रीकाजी मानसिंह चिरमवतुमणि स्रग्धरा
सायंतारा ॥

Paera Raks

Sirbe Raks

Siddhi Raks

Chandaly

Rushbad Raks

S. The Dm

ओम् नमो भगवत्ये आर्य्य ताराये ।

आर्य्य तारा स्तोत्रम् ।

स्रग्धरा-कन्द ।

वालाकालोक ताम्र प्रवरसुर शिरश्चारु चूडामणि श्री
सम्पत्सम्पर्करागानति चिर रचिता लक्तकव्यक्त भक्ती ।
भक्त्या पादौतवार्येकरपुट मुकुटा टोपमुग्नोत्तमाङ्ग
स्तारिण्यापच्छरण्ये नवनुतिकुसुमस्रग्भिरभ्यर्चयामि ॥ १ ॥

दोहा—हौ बिनजँ सब कविनके, चरण कमल शिर नाय ।

आर्यास्तुति भाषा करौं, निज गुरु पद चित लाय ॥

नहि अमूल लिखियत ककू, मूल कौडियत नाहिं ।

मो प्रमाद कटै जु ककु, कविवर क्षमियौ ताहि ॥

भावार्थ—हे आर्य्य (असत्कर्मोंसे दूर जानेवाली) हे तारिणि
(दुःखसागरसे पार करनेवाली) हे आपत्तशरण्ये (विपत्तिमें रक्षा
करने वाली) मैं दोनों हाथों को जोड़कर शिरपर धरनेसे झुका
हुआ हूँ मस्तक जिसका प्रभात समयके सूर्यके ज्योति सदृश लाल
रंग वाले जो मृष्यदेव इन्द्रादिकों के शिरोमें अति सुन्दर शिखा रत्न
तिनकी जो शोभा सम्पदा तिसके मिलने से जो लाली तिस करके
अति शीघ्रही रची गई महावर कीसी विचित्र रेखा लेखना जिन्हों
में ऐसे आपके चरणोंको भक्तिसे नवीन रचित स्तुति रूप पुष्प माला

ओं करके पूजन करता हूँ, हे मातः आप आपत्शरण्या और तारिणी हो इस कारण विपत्तिमें पड़े हुए मुझे उद्धार करी यह कविका आशय है ॥ १ ॥

दुर्लङ्घे दुःखवन्धौ विनि पतित तनुर्दुर्भगः कान्दिशीकः

किंकिमूढः करो मील्यसक्तदपि कृता रम्भवैयर्थ्यं खिन्नः ।

श्रुत्वा भूयः परेभ्यः क्षत नयन इव व्योम्नि चन्द्रार्कलक्ष्मीम्

आलोकाशानि वद्धः परगति गमनस्त्वांश्रये पापहन्त्रीम् ॥ २ ॥

हे भगवति ! अति कष्टसे पार होने योग्य जो दुःखरूप अग्नि है तिसमें पड़ा है शरीर जिस का तथा भाग्य हीन तथा भय करके चारो दिशाओं को भागता तथा निज कर्त्तव्य विवेक से रहित तथा क्या क्या करूँ इस प्रकार अनेक बार भी आरंभ किये हुये कर्मकी विफलता देखकर खेद से संयुक्त तथा दूसरों के अधीन है शरीर यात्रा जिसकी ऐसा नेत्र हीन पुरुषके समान मैं दूसरों (आचार्या दिकों) के मुखसे आकाश में चन्द्रमा सूर्यकी शोभा के तुल्य शोभा वाली आपको सुनकर आपके दर्शन की आशा में बँधा सर्व पापों की नाश करने वाली आप का आश्रय करता हं भाव यह है कि ऐसी दशा में भी क्या आप मेरी रक्षा न करेंगी ॥ २ ॥

सर्वस्मिन् सत्वमार्गे ननु तव करुणा निर्विशेषं प्रवृत्ता

तन्मध्ये तद्गृहेण ग्रहणमुपगतं मादृशस्याप्यवश्यम् ।

सामर्थ्यं चाद्वितीयं सकल जगदध्वान्ततिग्मांशु विम्बं

दुःख्येवाहं तथापि प्रतपति धिगहो दुःष्कृतं दुर्विदग्धम्

॥ ३ ॥

हे भगवति ! संसारके सम्पूर्ण प्राणीमात्रमें आपकी कृपा शत्रु मित्रमें उदासीनता भावको छोड़ कर एक ही सी हो रही

है इसी कारण उन्ही प्राणियोंमें प्राणीमात्रके होनेसे मेरा भी होना अवश्य ही है सम्पूर्ण प्राणियोंमें करुणा ही नहीं अपिच जगत्के पातक रूप अन्धकारको नाश करनेवाली सूर्यमण्डलके समान आपका अनुपम सामर्थ्य भी है परन्तु आपके ऐसे करुणा सामर्थ्य होनेपर भी मेरे दुःख न दूर होनेमें आपका कोई दोष नहीं किन्तु मेरे ही पूर्व जन्ममें किया निषिद्ध परिणामका देनेवाला अशुभ कर्म पीड़ित करता है यह कहनेसे कविने अपनी मन्दभाग्यता दिखलाई ॥ ३ ॥

धिग् धिग् मां मन्दभाग्यं दिवसकररुचाप्यप्रणुत्ताम्बुकारं
तृष्यन्तं कूलकच्छे हिमशकलशिला शीतले हैमवत्याः ।
रत्नद्वीपप्रतोल्या विपुलमणिगुहागेहगर्भे दरिद्रं
नाथीकृत्याप्यनाथं भगवति भवतीं सर्वलोकैकधात्रीम्

॥ ४ ॥

हे भगवति ! सम्पूर्ण संसारकी मुख्य पालन करनेवाली आपको आश्रय करके भी अनाथ ही रहा ऐसे भाग्यहीन मोको अनेक बार धिक्कार है कैसा मैं हूँ सूर्यके प्रतापके समान तेज धारण करनेवाली आपसे भी जिसका अज्ञान रूप अन्धकार दूर न हुआ तथा तुषारकी शिला खण्डके समान शीतल अर्थात् सर्व दुःख निवारक जो आपका प्रियस्थान है (मठ आदि) तिसमें बैठकर भी रागादि तृषा जिसकी दूर न हुई तथा बुद्ध आदि रत्नोंका जो स्थान है सोई हुआ संसार और शान्तिके मध्यवर्ती होनेसे द्वीप तिसमें जो मोक्ष मार्ग है तिसमें बहुत सी मणिअसि भरे हुए गुप्त स्थल जिसमें ऐसे घरके बीचमें रह कर भी ज्ञान रूप रत्नके रहित होनेसे दरिद्री हूँ ॥ ४ ॥

मातापि स्तन्यहेतोर्विरुवति बहुश. खेदमायाति पुत्रे
 क्रोधं धत्ते पितापि प्रतिदिवसमसत्कार्यनामु प्रयुक्तः ।
 त्वं तु त्रैलोक्यवाञ्छाविपुलफलमहाकल्पवृक्षाग्रवल्ली
 सर्वेभ्योऽभ्यर्थितार्थान् विसृजसि न च ते विक्रिया जातु
 काचित् ॥ ५ ॥

हे भगवति ! बारंबार दूध पीनेके निमित्त रोनेवाले पुत्र पर
 माता भी खेद पाती है तथा दिनों दिन अशुभ वस्तु के मागने वाले
 पुत्रपर पिता भी क्रोध करता है परन्तु त्रिलोकी की इच्छा पूर्ण
 करना रूप वड़ा फल है जिसका ऐसी कल्प वृक्ष की वड़ी श्रेष्ठता
 के समान आप सब याचकोंको उनके मांगे हुये सम्पूर्ण पदार्थ देती
 हो और किसी समयमें भी आपका स्वभाव अशुभ नहीं होता
 भाव यह है कि निज पुत्रपर माता पिता तो किसी समय क्रुद्ध भी
 हो जाते हैं परन्तु आप निज भक्त पर कभी नहीं ॥५॥

यो यः क्लेशौघवर्जित् ज्वलिततनुरहं तारणी तस्य तस्ये-
 त्यात्मोपन्नं प्रतिज्ञां कुरु मयि सफलां दुःखपातालमग्ने ।
 वर्द्धन्ते यावदन्ते परुषपरिभवाः प्राणिनां दुःखवेगाः
 सम्यक्संबुद्धयानि प्रणिधिधृतधियां तावदेवानुकम्पा ॥६॥

हे भगवति ! क्लेश समूह रूप अग्निसे दग्ध जिसका है शरीर
 ऐसा जो जो प्राणी होगा तिस तिसकी उद्धार करने वाली मैं होजंगी
 इस प्रकार आपही से पूर्ण होने योग्य जो आपकी प्रतिज्ञा है
 तिसको अति गम्भीर दुःखमें डूबे हुये मेरे पर सफल करिये क्यों कि
 अति कठिन अपमान होता है जिन्हींमें ऐसे जो प्राणियोंके दुःख
 समूह है सो जब तक बढ़ते हैं तभी तक श्रियुत बुद्ध जीके कहे हुये

मार्गमें भले प्रकारसे स्थिर की है बुद्धि जिन्होंने ऐसे आप सरीखों की कृपा (दीन रक्षा रूप) भी बढ़ती है इससे मुझे भी पार करिये यह भाव है ॥६॥

इत्युच्चैरुर्ध्वबाहौ नदति नुतिपदव्याजमाक्रन्दनादं
नाहं त्यज्योऽप्युपेक्षां जननि जनयितुं किम्पुनर्यादृशीत्वम् ।
त्वत्तः पश्यन् परेषामभिमत विभव प्रार्थनां प्राप्तुकामो
दह्येऽसह्येन भूयस्तरमरतिभुवा सन्ततान्तर्ज्वरेण ॥ ७ ॥

हे माता ! इस प्रकार ऊपरकी भुजा उठा कर स्तुति शब्दके छलसे भय ध्वनि करनेवाले पुरुष और कोई साधारण मनुष्य भी तिरस्कार करने योग्य नहीं होता न कि महा करुणा सम्पन्न आप अपिच आपके समीपसे आपके भक्तोंकी इच्छानुसार सम्पदाकी प्रार्थना पूर्ण देख कर अपनी भी प्रार्थना पूरी होनेकी कामना करता हुआ मैं अशान्तिसे उत्पन्न हुआ जो अति दुःखसे सहने योग्य चित्त संताप तिस करके अत्यन्त पीड़ित हो रहा हूँ सकल मनुष्योंको सहज स्वभावसे ही मनोभिलषित वर देनेवाली आप मेरे दुःखसे चिन्नानेकी भी नहीं सुनती धिक्कार है मेरे भाग्यकी ॥ ७ ॥

पापी यद्यस्मि कस्मात् त्वयि मम महती वर्द्धते भक्तिरेषा
श्रुत्या स्मृत्या च नाज्जायपहरसि हठात् पापमेका
त्वमेव ।

त्यक्तव्यापारभारा तदसि मयि कथं कथ्यतां तथ्यकथ्ये
पथ्यं ग्लाने मरिष्यत्यपि विदुलकृपः किं भिषग् रो-
धीति ॥ ८ ॥

हे भगवती ! यदि मैं पापकारी होऊं तो आपमें मेरी इतनी अधिक भक्ति क्यों होती आपके श्रवण करनेसे चित्तमें बारम्बार ध्यान करनेसे तारा इत्यादि आपके नाम लेनेसे एक आपही सहठ पापकी नाश करनेवाली हो हे सत्यवादिनि वह जो दीनो-द्वारण रूप अपना कर्तव्य है सो क्या आपके चरणोंमें पड़ हुए मेरे ही पर नहीं रहा गह कहिये क्या महा कृपालु वैद्य महा दुःखी मरते हुये रोगी पर औषधि रोक देते हैं नहीं करते ही हैं भाव यह है रागादि महा रोगोंसे व्याकुल होनेसे असाध्य रोगी मुझे जानके अमृत वर्षिणी दृष्टिसे देखिये ॥ ८ ॥

मायामात्सर्यमानप्रभृतिभिरधमैस्तुल्यकालं क्रमाच्च
स्वैर्दोषैर्वाह्यमानो मठकरभ इवानेकसाधारणांशः ।

युष्मत्पादाब्जपूजां क्षणमपि न लभे यत्तदर्थं विशेषाद्
एषा कार्पण्यदीनाक्षरपदरचना स्थान्मभावव्यकामा

॥ ९ ॥

हे भगवती कल दूसरेके गुणोंको देखकर जलना अहंकार इत्यादि अपने अनेक निषिद्ध अपराधोंसे एकबार ही अथवा पृथक् पृथक् चला गया अनेक मनुष्योंका समान भाग है जिसमें ऐसे जंटके सदृश होकर मैंने आपके चरण कमलका पूजना क्षण भर भी न कर पाया इसका कारण मेरी विशेष करके दुःखी होनेसे दीनता युक्त अक्षरोंको जो वाक्य रचना है सो सफल होय ॥ ९ ॥

कल्पान्तोद्भ्रान्त वातभ्रमितजल चलल्लोलकल्लोलहिला
संचोभीत्क्षिप्त वेलातटविकट चटत्स्फोरमोद्वाहहासात् ।

मज्झि भिन्ननौकैः सकरुणरुदितावन्दनिसन्दमन्दैः
स्वच्छन्दं देवि सद्यस्त्वदभिनुतिपरैस्तीरमुत्तीर्यतेऽत्थैः ॥

१० ॥

हे भगवती ! जलभयसे आपही रक्षा करती हो प्रलयकालमें प्रचंड पवनसे घुमाये हुये जलकी जो शीघ्र चलती हुई लहरों की लीला तिसकरके जो विफलता तिससे उल्लंघित जो मर्यादा भूमि है तिसमें जो अतिभयंकर चट चट इस प्रकार जो शब्द है घोरहंसना जिसका ऐसे समुद्रके भी नौका टूटनेसे डूबते हुये तथा दीनता पूर्वक रुदन करनेसे चेशा हीन होकर अपने को मृतक जान अर्थात् जीविताशा रहित होकर आपकी स्तुतिमें तत्पर होनेवाले पुरुष आनन्द सहित शीघ्रही पार उतरते है ॥१०॥

धूमभ्रान्ताभ्रगर्भीः प्रवगगनगृहोत्सङ्गलिङ्गत् स्पुलिङ्ग—
स्फूर्ज्ज्वाला करालज्वलनजवविशद्वैश्व विश्रान्तशय्यः ।
त्वय्यावद्वप्रणामाञ्जलिकुटमुपुटा गद्गदोद्गीतयाञ्चाः

प्रोद्यद्विद्युद्विलासोज्वलजलदजवैराब्रियन्ते क्षणेन ॥११॥

हे भगवती ! अग्नि भयसे भी आप ही रक्षा करती हो, धुंआका जो परिभ्रमण सोही भया मेघ तिसके संघटनसे प्रगट भया आकाश रूप गृह तिसमें उड़ते हुये अग्नि कणों करके सहित इधर उधर प्रकाशमान ज्वालाओं करके अति भयंकर अग्निके वेग भयसे भागते मनुष्य घरमें घुसकर शय्यापर बैठकर परिश्रम रहित होते हैं । आपके प्रणाम करनेकी दोनों हाथ जोड़ मुकुट सम धरनेवाले गद्गद वाणीसे प्रार्थना (मुझे पार करो) करनेवाले अधिकतर प्रकाशमान विजलीकी लीलासे शोभित जो मेघ तिनके वेगसे अति शीघ्र आच्छादित होते हैं ॥ ११ ॥

दानाभ्यः पूर्यमाणो भयकटकटकालम्बिलोलम्ब माला
हूङ्कारा ह्रयमानप्रतिगजजनितद्वेषवक्त्रे द्विपस्य ।

दन्तान्तोत्तुङ्गदोलातलतुलित तनुस्वामनुस्मृत्य मृत्युं
प्रत्याचष्टे प्रहृष्टः पृथुशिखर शिरःकोटिकट्टीपविष्टः

॥ १२ ॥

हे भगवती ! गजके भयसे भी आपही रक्षा करती हो, मद
जलसे भरे हुये उभय कपोलस्थलमें लटके हुए भीरोंकी पंक्तिकी
जो मधुर गुञ्जा ध्वनि तिसे सुनकर सन्मुख हुए जो शत्रु हस्ती
तिनसे बैर करनेवाले हस्तीके ऊपरको उठे हुए दांतके अग्रभाग
पर लटका हुआ है शरीर जिसका ऐसा मनुष्य आपको स्मरण
करके बड़े पर्वतके अति ऊँचे स्थलपर बैठके समान सुखित होकर
मृत्यु का तिरस्कार करता है ॥ १२ ॥

प्रौढग्रासप्रहारप्रहतनरशिरःशूलवल्ल्युत्सवायां
शून्याटव्यां कराग्र ग्रहविलसदसिस्फोटकस्फ्रीत दर्पान्
दस्यून् दास्ये नियुङ्क्ते सभृकुटिकुटिलभूकटाक्षेक्षिताक्षां
श्चिन्तालेखन्यखिन्नस्फुटलिखितपदं नाम धाम श्रियान्ते

॥ १३ ॥

हे भगवति ! चौर भयसे भी आपही रक्षा करती हो । ध्यान
रूप कलमसे सावधानता पूर्वक विस्मृत लिखे हैं शब्द जिसमें तथा
सम्पदाओंका घर ऐसा जो आपका नाम है अर्थ तारा इत्यादि
सो बड़े बड़े भालों (शस्त्र विशेष) के प्रहार करके कटे हुए
मनुष्योंके शिरोंमें जो शूल दण्डका छेदना है तिससे उत्सव होरहे
हैं जिसमें ऐसे निर्जन वनमें हाथमें पकड़े हुए जो चमचमाते

खड्ग हैं तिनकी धाराके दिखानेसे बहुत बढ़ा है अहंकार जिनको
तथा क्रोधसे भौंह टेढ़ी कर मस्तक सकोड़के और कुटिल दृष्टि
करके देखनेवाले डकैतोंको भी निज भक्तोंके सेवक बनाता है ॥१३॥

वज्रक्रूरप्रहारप्रखरनख मुखोत्खातमत्तेभकुम्भ-

श्रोतत्सान्द्रास्वधौतस्फुटविकटसटासङ्कटस्कन्धसन्धिः ।

क्रुध्यन्ना पित्मुरारादुपरिमृगरिपुस्तीक्ष्णदंष्ट्रोत्कटास्य-
स्त्रस्यन्नावृत्य याति त्वदुचितरचितस्तोत्रदिग्धार्थवाचः

॥ १४ ॥

हे भगवती ! सिंहके भयसे भी आप ही रक्षा करती हो वज्रके
समान अति कठोर प्रहारवाले जो अति तीक्ष्ण नखाग्र हैं तिनकर
के भिन्न जो गजके कुम्भस्थल हैं तिनमेंसे टपकता हुआ जो सघन
रुधिर है तिससे धुये हुये अति भयानक स्कन्धरोमींसे ढपी हुई है
ग्रीवा जिसकी तथा तीक्ष्ण दंष्ट्रा होनेसे भयंकर है मुख जिसका
ऐसा क्रोध करके ऊपर गिरनेकी इच्छा करता भी सिंह आपकी
अनुरूप स्तुति रचना करके शोभित है अर्थ जिसका ऐसी बाणी
उच्चारण करनेवाले पुरुषके समीपसे भय भीत होकर लौट जाता
है ॥ १४ ॥

धूमावर्तान्धकाराकृतिविकृतफणिस्फारफुत्कारपूर-
व्यापारव्यात्तवक्त्रस्फुरदुरुरसनारज्जुकीनाशपाशैः ।

पापात् सम्भूय भूयस्तव गुणगणनातत्परस्त्वत्परात्मा

धत्ते मत्तालिमालावलयकुवलय स्रग्विभूषां विभूतिम्

॥ १५ ॥

हे भगवती ! सर्पके भयसे भी आप ही रक्षा करती हो
आपका भक्त कदाचित् पाप कर्मोदयसे धुंआका समूह है जिसमें

ऐसे अन्धकारके समान आकार है जिसका तिस भयानक सर्पने फूत्कार समूह करनेके कारण पैलाया जो मुख है तिसमें चलायमान दोनों जिह्वा ही हुई रस्सी यम पाशके समान अति भयंकर तिन करके घेरा गया मनुष्य आपके गुण वर्णन करनेसे मदयुक्त भ्रमर समूहसे लपेटी हुई जो नील कमल माला है तिसके समान शोभाको धारण करता है अर्थात् आपकी कृपासे वही घोर सर्प अति सुखदायक हो जाता है ॥ १५ ॥

भर्तृभूभेदभीतोद्भट कटकभटाकृष्टदुःश्लिष्टकेश-

श्चञ्चद्वा चाटचेटोत्कटरटितकटु ग्रन्थिपाशोपगूढः ।

क्षुत्तृट्चामोष्ठकण्ठस्थजति स सपदि व्यापदं तां दुरन्तां
यो यायादार्यताराचरणशरणतां स्निग्धबभ्रूज्भितोऽपि

॥ १६ ॥

हे भगवती ! बन्धन भयसे भी आप ही रक्षा करती हो स्वामीके क्रोधसे डराते जो मुख्य सेना भट हैं तिन करके खैचनेसे इधर उधर हो गये हैं केश जिसके तथा जहां तहां घूमते जो बहु भाषी राजसेवक हैं तिनके दुष्ट वाक्योंसे ऐसीदृढ़ जो पास (फांसी) तिस करके बंधा तथा क्षुधा और लृषासे सूखते हैं कंठ व ओठ जिसके तथा निजस्त्रेही और कुट विषयोंसे भी छोड़ा गया जो पुरुष आर्यताराके चरणोंके शरण होता है वह अतिशीघ्र ही उस घोर विपत्तिकी पार होता है ॥ १६ ॥

मायानिर्माणकर्मक्रमकृतविकृतानेकनेपथ्यमिथ्या-

रूपारम्भानुरूपप्रहरणकिरणाडम्बरोडामराणि ।

त्वत्तन्त्रोद्धार्यमन्त्रस्मृतिहृतदुरितस्यावहन्यप्रधृष्ट्यां

प्रेतप्रोतान्वतन्त्रीनिचयविरचितस्रञ्जि रक्षांसि रक्षाम्

॥ १७ ॥

हे भगवती ! राक्षसोंके भयसे भी आप ही रक्षा करती हो कपट करके अनेक अज्ञुत भयानक रूपोंको बनाकर उन्हीं मिथ्य रूपोंके अनुरूप घोर शस्त्रोंकी चमकसे अति भयंकरता सहित तथा मृतक शरीरकी आँतें निकाल कर धारण करनेवाले राक्षस भी आपके जो तन्त्रतारार्णव इत्यादि तिनमें कहे हुये जो मन्त्र तिनके ध्यान करनेसे दूर हुये हैं पातक जिसके ऐसे पुरुषकी कोई शत्रु आदि भी कष्ट न दे सकै इस प्रकारकी रक्षा करते हैं ॥ १७ ॥

गर्जं जीमूतमूर्त्ति-चिमदमदनदीबद्धधाराभ्यकारे

विद्युद्योतायमानप्रहरणकिरणे निष्पतद्वाणवर्षे ।

रुद्धः संग्रामकाले प्रबलभुजबलैर्विद्विषद्भिर्द्विषद्भि-

स्त्वद्वत्तोत्साहपुष्टिः प्रसभमरिमहीमेकवीरः पिनष्टि ॥ १८ ॥

हे भगवति ! सङ्ग्रामविजय भी आप ही देती हो गर्जते हुए मेघके समान शरीर वाले गजोंके कपोलस्थानमें तीन जगहसे करते हुए मदकी जो जदी तिसकी अखंड धारासे अभ्यकार सा हो रहा है जिसमें तथा बिजलीके समान प्रकाशमान शस्त्रोंकी धारायें जिसमें तथा बाणोंकी वर्षा हो रही है जिसमें ऐसा जो वर्षाकालके समान संग्राम समय है तिसमें अति बली हिंसक शत्रुओंसे घेरा भया भी आपका भक्त आपके दिये साहसकी वृद्धिसे सहठ शत्रुओंको विनाश करता है ॥ १८ ॥

पापाचारानुबन्धोद्धतगदविगलत्पूतिपूयास्रविस्त्र-

त्वङ्मांसा सक्तनाडी मुखकुहरचलज्जन्तु जग्धक्षताङ्गाः ।

युष्मत्पादोपसेवागदवरगुटिकाभ्यासभक्तिप्रसक्ता

जायन्ते जातरूपप्रतिनिधिवपुषः पुण्डरीका यताक्षाः

॥ १९ ॥

॥ १९ ॥

हे भगवती ! पातकोंके करनेसे उत्पन्न हुआ जो घोर रोग है तिस करके लगी हुई वस्तुके समान दुर्गंध युक्त पीव रुधिर सहित जो सड़ी त्वचा व मांस तिससे मिली नाड़ियोंके मुख छिद्रमें रिंगने वाले कीड़ोंके भक्षण करनेसे क्षीण होगया है अंग जिनका ऐसे दीन पुरुष भी आपके चरणोंकी सेवा ही हुई अष्ट औषधीकी गुटिका तिसके भक्षण करने (सेवन) में लगाया हैं चित्त जिन्होंने वह सुवर्णके समान कान्ति है जिसकी और कमलके समान नेत्र हैं जिनके ऐसे होते हैं अर्थात् ऐसे महारोगसे पीड़ित भी आपके चरणोंकी सेवासे दिव्य रूप होते हैं यह बड़ा अद्भुत सामर्थ्य आपका है ॥ १८ ॥

विश्रान्तं श्रोत्रं पात्रे गुरुभि रूपहतं यस्य नाम्नायभैक्ष्यं
विदद्गोष्ठीषु यश्च श्रुतधनविरहान्मूकता मभ्युपैति ।
सर्वालङ्कारभूषाविभवसमुद्भितं प्राप्य वागीश्वरत्वं
सोऽपि त्वङ्गति शक्त्या हरति नृपसभे वादिसिंहास-
नानि ॥ २० ॥

हे भगवती ! जिस मनुष्यके कानरूप पात्रमें गुरुकी दी हुई शास्त्रा रूप भिक्षा नहीं पड़ी तथा जो मनुष्य शास्त्ररूप धनके अभावसे विद्वानोंकी सभामें बैठकर मौन भावको पहुँचता है । वही पुरुष आपके भजन प्रभावसे सम्पूर्ण जो अलङ्कार शास्त्र (रूपक उपमादि) है तिनकी शोभासे प्रकाशमान पाण्डित्य पाकर राज-सभामें वाद करनेवाले पुरुषोंके बैठनेके स्थान ग्रहण करता है अर्थात् महामूर्ख भी आपकी कृपासे बड़ा विद्वान् होता है ॥ २० ॥

भूशय्या धूलिधूमः स्फुटितकटितटीकर्पटोद्घाटिताङ्गो ।
यूकायूषि प्रपिषन् परपुरपुरतः कर्परे तर्पणार्थी ।

त्वामाराध्याध्यवस्यन् वरयुवतिवहच्चा मरस्मोरचाब्धीम्
उर्ज्जीं धत्ते मदाम्बुद्विपदशनघनामुद्धृतैकातपत्राम् ॥२१॥

हे भगवती ! अति निर्धनता होनेसे पृथिवी ही हुई शय्या
तिस पर सोनेसे मलिन है शरीर जिसका तथा फटे हुए वस्त्र
कमरमें बांधनेसे खुल गये हैं गुह्य अंग जिसके तथा शरीरमें अति
मलिनतासे उत्पन्न हुये जीवोंको मारनेवाला तथा घर घरके द्वारपर
जाके खप्परमें भित्ता मांगनेवाला पुरुष भी आपका सेवन रूप
उद्योग करनेसे श्रेष्ठ तरुणियों करके उड़ाये गये जो चमर सी ही
है मन्द हसना जिसका तथा मद करके अम्ब हो रहे जो गजेन्द्र है
तिनके दांतेसे भरी हुई तथा ऊपरको उठाया गया है उसी पुरुष
का ये कृत्त जिसमें ऐसी पृथिवीको पाता है अति दरिद्री भी आपकी
सेवासे राज्य पाता है यह भाव है ॥ २१ ॥

सेवाकर्म्मन्तशिल्पप्रणयविनिमयोपायपर्य्यायखिन्नाः

प्राग्जन्मोपात्तं पुण्योपचितशुभफलं वित्तमप्राप्नुवन्तः ।

दैवातिक्रमाणीं त्वां कृपण जनजनन्यर्थमभ्यर्थ भूयो

भूमेर्निर्वान्तचामीकरनिकरनिधीन्निर्धनाः प्राप्नुवन्ति ॥२२॥

हे कृपण-जन-जननि, दीन-जन परिपालके ! दूसरेका सेवक
होना कृषि करना शिल्पविद्या मांगना क्रय विक्रय करना धनके
लालचसे दूसरेके पीछे चलना इत्यादि अनेक प्रकारसे धनके उपा-
र्जन करनेके निमित्त उपाय करनेसे दुःखी पूर्वजन्ममें किये पुण्यके
शुभ फलसे प्राप्त होनेवाले धनके न पानेपर भाग्यकी भी अन्यथा
करनेवाली आपसे धन मांगकर अति निर्धन पुरुष पृथिवीमेंसे
सुवर्ण समूहके निकलनेवाले निधियोंको पाते हैं भाग्यहीन पुरुष भी
आपके चरणसेवनसे अनायासही बड़ा धन पाते हैं यह भाव है ॥२२॥

वृत्तिच्छेदे विलक्षः क्षतनिवसनया भार्यया भर्त्स्यमानो
 दूरादात्मभरित्वात्स्वजनसुतमुहृद्भृभुभिर्वर्ज्यमानः ।
 त्वय्यावेद्य स्वदुःखं तुरगखुरमुखोत्खातसीम्नां गृहाणा-
 मीष्टे स्वान्तःपुरस्त्रीवलयरुणरुणाजात निद्राप्रबोधः ॥ २३ ॥

हे भगवति! जीविका न होनेसे फटे हुये बस्त्र धारण करनेवाली
 निज स्त्रीसे अनादर पानेवाला तथा अपनेही उदर पूर्ण करनेसे अपने
 सेवक पुत्र मित्र कुटुम्बियोंसे दूरसेहो छोड़ा गया ऐसा विपरीत चरित्र
 वाला पुरुष आपसे अपना दुःख निवेदन करके घोड़ीके खुरोंकी कोर
 से खोदी गई है मर्यादा भूमि जिनकी ऐसे घरोंमें निज नारियोंके
 आभूषण शब्दसे जागने वाले पुरुष रमता है अति दुर्गत पुरुष भी
 आपकी सेवासे बड़ा ऐश्वर्य पाता है यह भाव है ॥ २३ ॥

चक्रां दिक्चक्रचुम्बिस्फुरदुरुकिरणा लक्षणांलंकृतास्त्री
 षड्दन्तोदन्तिमुख्यः शिखिगलरुचिरश्यामरोमावराश्वः ।
 भास्वद्भास्वन्मयूखो मणिरमलगुणः कोषभृत्पूर्णकोषः
 सेनानीवीरसैन्यो भवतिभगवति त्वत्पसादांशलेशात् ॥ २४ ॥

हे भगवति ! आपकी कृपाके अतिसूक्ष्म भागसे भी मनुष्यका
 शासन दिगन्त पर्यन्त होता है तथा उसकी स्त्री प्रकाशमान तेज
 सहित होती है और स्त्रियोंके जो शुभ लक्षण हैं पति शुश्रूषण
 आदि तिस करके शोभित होती है तथा सब गर्जोंमेंसे उत्तम कः
 दांतवाला गज होता है तथा सोर कांठके समान सुन्दर श्याम
 केशोंवाले घोड़े उसके होते हैं तथा सूर्यके तेजके समान है प्रकाश
 जिनका और विष हरण इत्यादि शुभगुणों वाले रत्न उसके होते हैं
 तथा उसके कोषाध्यक्षका कोष धनसे परिपूर्ण होता है तथा

उसका सेनापति वीर पुरुष है सेनामें जिसके ऐसा होता है
अनेक जन्मोंमें किये पुण्य प्रभावसे पाने योग्य अखंड भूमंडलाधिप-
तित्व आपकी थोड़ीसीही कृपासे प्राप्त होता है यह भाव है ॥२४॥

खच्छन्दं चन्दनाम्भः सुरभिमणिशिलादत्तसङ्केतकान्तः

कान्ताक्रीडानुरागादभिनवरचितातिथ्यतथ्योपचारः ।

त्वद्विद्या लब्धसिद्धिर्मलय मधुवनं याति विद्याधरेन्द्रः

खड्गांशु श्यामपीनोन्नतभुजपरिघप्रोक्षसत्पारिहार्यः ॥२५॥

हे भगवति ! चन्दन से मिले हुये जल करके सुगंधित जो रत्न
शिला हैं तिसका संकेत (इशारा) करने वाली है स्त्रियां जिसकी
तथा स्त्रियों ने क्रीडा में प्रेमसे नवीन किया जो अतिथि कासा
सत्कार तिसका यथोचित सेवन करनेवाला तथा खड्गके धारा
की चमकसे कुछ श्यामतायुक्त स्थूल और ऊपरको उठा भया
परिघशस्त्रके आकार वाला भुजदंड तिसमें शोभायुक्त हैं आभूषण
जिसके ऐसा मनुष्य आपकी जो विद्या(धारणी आदि)तिस करके
सिद्धि पा कर विद्याधरों (देव विशेष) का अधिपति होकर मलय
पर्वत पर वसंतकालके समान शोभा युक्त वनमें जाकर अपनी
इच्छाके अनुसार विहार करता है आपके सेवन करनेसे देव
सम्पदा भी कुछ दुर्लभ नहीं होती यह भाव है ॥ २५ ॥

हाराक्रान्तस्तनान्ताः श्रवणकुवलयस्पर्द्धमानायताक्ष्यो

मन्दारोदारवेणी तरुणपरिमलामोदमाद्यद् द्विरेफाः ।

काञ्चीनादानुबन्धोद्धत तरचरणोदारमञ्जीरतूर्या-

स्त्वन्नाथान् प्रार्थयन्ते स्मरमदमुदिताः सारदा देवकन्याः

॥ २६ ॥

हे भगवति ! अनेक हारोंसे भरा हुआ है स्तनोंका मध्य भाग

जिनका तथा कानोंमें धारण किये हुये जो कमल पुष्प हैं तिनसे
सर्द्धा करनेवाले बड़े हैं नेत्र जिनके तथा पारिजातके पुष्पोंसे
रचित जो बहुत बड़ी वेणी तिसके अति सुगंधित रस लेनेसे मद
युक्त भ्रमर है आस पास जिनके तथा कांची (कटिभूषण) के शब्दसे
मिला हुआ है शब्दजिनका ऐसे जो अति चंचल बड़े मंजीर सोही
हुये तूर्य (वाद्य विशेष) तिनको चरणोंमें धारण करनेवाली तथा
कामदेव के मद से आनंद युक्त देवताओं की कन्या में आपके दासों
को अपना पति बनानेके कारण आदर सहित प्रार्थना करती है॥२६॥

रत्नच्छन्नान्तवापीकनककमलिनीबच्चकिञ्चल्लक्षमाला-

मुन्मज्जत्पारिजातद्रुममधुपबधूदूतधूलौ वितानाम् ।

वीणावेणुप्रवीणामरपुररमणीदत्तमाधुर्य्यतूर्य्यां

कृत्वा युष्मत्सपथ्यामनुभवति चिरं नन्दनोद्यानयात्राम्

॥ २७ ॥

हे भगवति ! वैडूर्य आदि मणियोंसे भरा हुआ है मध्य भाग
जिनका ऐसी जो बावड़ी तिनमें सुवर्णकी कमलिनी और हीरा
की कलीके समूह वाली तथा कुछ खिले हुये पारिजात वृक्षके
पुष्पोंमेंसे भ्रमर नारियोंने उठाया जो रस तिसका वितानसा बन
रहा है जिसमें तथा वीणाके वजानेमें निपुण ऐसी जो देव नगर
नारी है तिन्होंने मधुर शब्द करके बजाये हैं तूर्य जिसमें ऐसे नन्द-
नोद्यान (देवोद्यान) यात्राका सुख आपके पूजन करनेसे मनुष्य
बहुत समय पर्यन्त भोगता है ॥ २७ ॥

कपूरैलालवङ्गत्वगुरुनरदक्षोदगम्भोदकायां

कान्ताकन्दर्पदोर्पोत्कटकुचकुहरावर्त्तविश्रान्तवीच्याम् ।

मन्दाकिन्याममन्दच्छटसलिलसरित्क्रीडयासुन्दरीभिः
क्रीडन्ति त्वद्गतान्तःकरणपरिणतोत्तमपुण्यप्रभावाः ॥२८॥

हे भगवति ! कपूर इलाची लौंग तज अगर जटामांसीको चूर्ण के सुगंधसे सहित है जल जिसका तथा काम मदसे प्रगट हुये जो सुंदरियोंके कुच है तिनके बीचमें भ्रमण करनेसे क्षण भर विश्राम पाने वाली लहरें हैं जिसकी ऐसी भागीरथीमें आपके चरण कमलमें चित्त लगानेसे प्रगट हुये हैं बड़े पुण्य प्रभाव जिनके ऐसे आपके भक्त अपनी रमणियों करके सहित वेगसे बहने वाले जलमें जल विहारोचित क्रीडा करते हैं ॥ २८ ॥

गौर्वाणग्रामणीभिर्विनयभरनमन्मौलिभिर्वन्दिताञ्चः
स्वर्गोत्सङ्गेऽधिरूढः सुरकरिणि रुणझूषणोद्भासिताङ्गे ।
शच्यादोर्दामदोला विरलवलयितोद्दाम रोमाञ्चमूर्तिः
पूतस्त्वद्दृष्टिपातैरवति सुरमहीं हीरभिन्नप्रकोष्ठः ॥२९॥

हे भगवति ! विनय भारसे झुकेहुये है मुकुट जिनके ऐसे प्रधान देवों करके सादर की जाती है आज्ञा जिसकी तथा बजते हुये आभरणोंसे शोभित हैं अंग जिसके ऐसा जो देवज ऐरावत है तिसपर बैठने वाला तथा इन्द्राणीकी भुजलतासे निरन्तर आलिङ्गित होनेसे प्रगट हुये रोमावलीसे युक्त है शरीर जिसका तथा हीरा मणि शोभित है भुजदंड जिसका ऐसा मनुष्य आपके कृपाकटाक्षसे पवित्र होकर स्वर्गमें बैठकर देव भूमिका पालन करता है आपकी कृपादृष्टिसे मनुष्य इन्द्र पद सहजमेंही पाता है यह भाव है ॥२९॥

चूडारत्नावतंसा सनगतमुगत व्योमलक्ष्मीवितानं
प्रोद्यद्वालाकं कोटीपटुतरकिरणापूर्य्यमाण त्रिलोकम् ।

प्रौढालीढैकपादक्रमभरविनमद्ब्रह्मरुद्रेन्द्रविष्णु
त्वद्रूपं भाव्यमानं भवति भवभयोच्छित्तये जन्मभाजाम्॥

३० ॥

हे भगवति ! शिखाके मध्यमें स्थित जो रत्न है तिन करके रचे हुये आसनों पर स्थित जो सुगत (अक्षोभ्य आदि) है तिनकी जो आकाशमें शोभा है सोही है वितान जिसमें तथा उदयगिरि पर स्थित जो कीटियों संख्याके सूर्य हैं तिनका जो अत्युष्ण तेज है तिससे सर्वत्र भरा है त्रिलोक जिसने तथा आगेको बढ़ाकर धरा गया जो एक चरण तिसके भार से नमित हो गए हैं ब्रह्मा शिव इन्द्र विष्णु ऐसा जो आपका रूप है तिसे ध्यान करनेवाले मनुष्योंका संसार भय नष्ट होता है ॥ ३० ॥

पश्यन्त्येके सकोपं प्रहरणकिरणोद्गूर्णं दोर्दण्डखण्ड-
व्याप्तयोमान्तरालं वलयफणिफणादारुणाहार्यचर्यम् ।

द्विष्टव्युत्त्रासिहासोडुमरडमरुकोडामरास्फालवेला
वैतालीत्तालतालप्रमदमदमहाकैलिकोलाहलोग्रम् ॥ ३१

हे भगवति ! कोई योगीजन शस्त्रोंकी किरणोंसे शोभित जो भुजदंड हैं तिन करके आकाशमंडलका आच्छादन करनेवाला तथा वलयरूप जो सर्प है तिनके फणोंसे अति भयानक चरित वाला तथा चतुर्मार आदिक शत्रुओंको भयकारक जो विकट हास है तिसकरके सहित जो अति उच्च शब्दवाले डमरूका घोरना करनेके समय पर वैतालों (प्रेत जाति भेद) का ताल बजाना तिस करके आनन्द पूर्वक अहंकार करके जो अति विलास है तिसके कोलाहलसे अति भयानक ऐसे आपके रूपका ध्यान करते हैं ॥ ३१ ॥

केचित् त्वेकैकरोमोद्गमगतगगनाभोगभूभूतलस्थ-

स्वस्य ब्रह्मेन्द्र रुद्रप्रभृतिनरमरुत्सिद्ध गन्धर्व्वनागम् ।

दिक्चक्राक्रामिधामस्थितमुगतशतानन्तनिर्भाणचित्रं

चित्रं त्रैलोक्यवन्द्यं स्थिरचररचिताशेषभावस्वभावम् ॥ ३२

हे भगवति ! और कोई भक्तजन एक एक रोमके उत्पत्तिस्थान में वर्त्तमान जो आकाश है तिसका जो विस्तार है और पृथिवीका जो विस्तार है तिसमें आनन्द सहित ब्रह्मा इन्द्र शिव आदि देवगण मनुष्य मरुत् सिद्ध गन्धर्व नागोंको निवास देनेवाला अर्थात् रोम रोम में चारों द्वीपोंकी रचना की है तथा दिगन्त व्यापी जो तेज है तिसमें स्थित जो अनेक शत संख्यावाले सर्वज्ञ हैं तिनकी असंख्य रचना करके रमणीय तथा स्थिर पृथिवी आदि जड़ पदार्थ (चर देव आदि चैतन्य) तिनकी अशेष भाव करके रचनेका स्वभाव है जिसका तथा तीनों लोकोंको प्रणाम करने योग्य ऐसा बिचित्र जो आपका रूप है तिसे ध्यान करते हैं ॥ ३२ ॥

लाक्षासिन्दूररागारूणतरकिरणादित्यलौहित्यमेके

श्रीमत्सान्द्रेन्द्रनीलोपलदलितदलक्षोदनीलं तथान्ये ।

क्षीराब्धिदुग्धदुग्धाधिकतरधवलं काञ्चनाभं च केचित्

त्वद्रूपं विश्वरूपं स्फटिकवदुपधायुक्तिभेदादिभिन्नम् ॥

३३ ॥

हे भगवति ! और कोई योगीजन लाख और सिन्दूरके रंगके सदृश अति लाल किरणवाले सूर्यके समान आपके रूपको देखते हैं तथा कोई भक्तजन सघन शोभा युक्त जो नील मणिका खंड तिसके चूर्णके समान नील वर्ण वाले रूपको देखते हैं तथा कोई योगीजन क्षीर समुद्रका जो फेन सहित दुग्ध है तिससे भी अधिक शुक्त वर्ण वाले आपके रूपको देखते हैं और कोई तपाये हुये सुवर्णके सदृश

वर्ण वाले आपके रूपको देखते हैं इस प्रकार सर्वव्यापी आपका रूप वास्तवमें एकही है परन्तु अनेक भक्तोंकी उपासनाके भेदसे अनेक प्रकारका देख पड़ता है जैसे फिटकरीमें अनेक रंगके पदार्थों की छाया पड़नेसे अनेक प्रकारकी दिखाई देती है ॥ ३३ ॥

सर्वज्ञज्ञानदीपप्रकटितसकलज्ञेय तत्त्वैकसाक्षी
साक्षाद्वेत्तित्वदीयां गुणगणगणनां सर्ववित् तत्सुतो वा ।
यत्तु व्यादाय वक्तुं बलिभुजरटितं मादृशो रारटीति
व्यापत्वा तीव्रदुःखज्वरजनितरुजश्चेतसो हास्यहेतुः ॥

३४ ॥

हे भगवति ! सर्वज्ञका जो ज्ञान है सोही भया सम्पूर्ण अज्ञान अधकारका नाश करनेवाला दीपक तिस करके प्रगट किये गये जो समस्त ज्ञातव्य पदार्थोंके स्वरूप हैं तिनका मुख्य साक्षी ऐसा जो सुगत अथवा उनका पुत्र वागीश्वर आदिक आपके जो गुण (दया आदिक) तिनके समूहकी संख्याको भले प्रकार जानते हैं और मो सरीखा जो कोई दुःखी पुरुष अपना मुंह फैला कर कौआकी तरह चिल्लाता है उसका चिल्लाना अति कठिन दुःखरूप ज्वरसे उत्पन्न पीड़ायुक्त चित्तकी विपत्ति है और हंसीका कारण है ॥ ३४ ॥

यन्मे विज्ञप्सामानं प्रथमतरमदस्त्वं विशेषेण वेत्ती
तद्व्याहारातिरेकश्रमविधिरबुधस्वान्तसन्तोषहेतुः ।
किन्तु स्निग्धस्य बन्धोर्विप्रमिव पुरतो दुःखमुद्गीर्य वाचा
ज्ञातार्थस्यापि दुःखी हृदयलघुतया स्वस्यतां विन्दतीव ॥

३५ ॥

हे भगवति ! मेरी जो प्रार्थना है उसे आप पहिलेहीसे भले प्रकारसे जानती हो तिस प्रार्थनाके कहनेका जो अति परिश्रम उठा-

ना है सो मो सट्स अज्ञानीकी चित्त संतुष्टका कारण है परन्तु दुःखी पुरुष अपने चित्त लाघवसे निज सर्व हृत्तान्त जाननेवाले स्नेहीके आगे विष सट्स जो अपना दुःख है तिसे वाणी द्वारा उगल कर (कहकर) सावधान होजाता हैं ॥३५॥

कल्याणानन्दसिन्धुप्रकटशशिकले श्रीभरां देहिदृष्टिं
पुष्टिं ज्ञानोपदेशैः कुरु घनकरुणे ध्वंसय ध्वांतमंतः ।
त्वत्स्तोत्राभःपवित्रीकृतमनसि मयि श्रेयसः स्थानमेकं
दृष्टं यस्मादमोघ जगति तव गुणस्तोत्रमात्रं प्रजानाम् ॥

३६ ॥

हे शुभ कर्मोंके करनेसे जो आनन्द रूप समुद्र होता है उसमेंसे प्रगट होने वाली चन्द्रकलाके समान तथा हे विपुल करुणा करने-वाली ! मेरे पर अति स्नेह युक्त दृष्टि करिये तथा अद्वैत ज्ञानके उपदेशसे मेरा पोषण करिये तथा चित्तके अज्ञान अंधकारका नाश करिये आपकी स्तुतिरूप जलसे पवित्र हुये मेरे चित्तमें कल्याणका एक ही स्थान देख पड़ता है क्योंकि आपके गुणोंकी बल प्रशंसाही करना सर्वजमतमें सम्पूर्णमनुष्योंको सफलता देनेवाला है ॥३६॥

सस्तुत्य त्वद्गुणैर्घावयवमनियतेयत्तमाप्तं मया यत्
पुण्यं पुण्याहं वाञ्छाफलमधुररसास्वादमामुक्तिभोग्यम् ।
लोकस्तेनार्य्यलोकेश्वरचरणतलस्वस्तिकस्वस्तिचिन्हा-
मज्ञायायं प्रयायात् सुगतमुतमहीं तां मुखावत्युपाख्याम्

॥ ३७ ॥

हे भगवति ! आपके गुण समूहके लेश मात्रहीकी स्तुति करनेसे कल्याणकी इच्छा रूप फलका मधुर रसका स्वाद है जिसमें

तथा मोक्ष पर्यंत भोग करने योग्य जो निर्मर्याद-पुण्य सुभे प्राप्त भया है तिस करके आर्य लोकेश्वर चरण तल स्वस्तिक नाम कल्याण चिन्ह है जिसके ऐसो जो सुखावती नामवाली सुगत सुत-मही है तिसके शरण यह सम्पूर्ण संसार प्राप्त होय ॥ ३७ ॥

इत्यार्यतारायाः स्रग्धरा स्तोत्रं परिसमाप्तम् ॥

शुभम् ॥

कृतिरियं सर्वज्ञमित्रपादानां काश्मीरकाणां
ताराचरणरेणुधूसराणाम् ॥

इति श्री भिन्नवर सर्वज्ञमित्र विरचिते आर्यतारायाः स्रग्धरा
स्तोत्रे भाषानुवाद समाप्तः । शुभमस्तुतराम् ।

शकेऽब्धि त्रष्टभू १८३४ संख्ये चतुर्दश्यामिषेसिते आर्यतारास्तुते-
भाषानुवादः पूर्णतामगात् ॥१॥

इति श्री नेपाल राज्यान्तर्गत कान्तिपुर निवासी श्रीकाजीमान-
सिंहतुस्ताधराज्ञया फरुखाबादप्रान्तर्गत काम्पिन्नपुरवास्तव्य विद्वद्भर
दुर्गादत्त कृतार्यतारास्तोत्रस्य भाषा टीका समाप्तः । श्रीरस्तुतराम् ।



100
This book belongs to Sahu.

Lushpa Rethi Luladhar.
Ason Tol Dhalasi ko Karti pur.
Nepal Ason Dhalasi ko Karti pur.

न० २६ पांचागली, बड़ाबाजार

‘श्रीशंकर प्रेस’ कलकत्तामें

विठ्ठलदास कोठारी द्वारा

मुद्रित ।

श्रीशंकर

Maha Rathi

Rajimansing

Calcutta.

Sharmanna

Curnaman

Warriserupur

Barasagor

Calcutta

IRI

IRI